खामोश नहीं हूँ मैं

(कविता)

खामोश नहीं हूँ मैं

असंगघोष

तीसरापक्ष

खामोश नहीं हूँ मैं

पहला संस्करण : 2001

मूल्य : 60.00 रुपये

प्रकाशक
तीसरा पक्ष प्रकाशन
506/5, भानतलैया बड़ी खेरमाई मंदिर रोड
जबलपुर -- 482002

आवरण : विनय अंबर

मुद्रक
श्री पद्मावती आफसेट
अण्डर ब्रिज के पास, मदन महल, जबलपुर

KHAMOSH NAHIN HUN MAIN (Collection of Poems) Asangaghosh

पूज्यनीय
माता–पिता
को सादर

हल्लाड़ी

एक हल्लाड़ी •
घर में थी
जिस पर पीसा करती थी
माँ प्रतिदिन
काँदा, लहसन, खड़ी मिर्च
पोस्त के साथ पानी मिला
ज्वार की रोटी खाने, चटनी
चटनी जिसमे
हम पाते थे स्वाद
लजीज दाल सब्जी का एक साथ
सुबह–शाम, दोपहर ।

भरी दोपहरी मे
जब सूरज आसमान मे
ठीक सिर के ऊपर
टंगा होता
फसल काटती माँ
दोपहरी की छुट्टी मे
उसी चटनी से
खाती ज्वार की एक रोटी
पानी पी फिर काम में लग जाती
शाम को मजदूरी मे मिलते
ज्वार के गिने–चुने फुकड़े #
जिन्हे घर ला माँ झाडती डण्डे से
निकालती थी ज्वार रात में
हम दिखाते दिन भर धूप

माँ
कभी रात मे
कभी अलसुबह
अलगनी के नीचे रखी घट्टि मे

•पत्थर की शिला, #ज्वार की बाल/गुच्छा

हसीन सपनों

मेरे हसीन सपनों
क्यो आते हो
तुम बार–बार
उन काले–काले
घुमडते बादलो की तरह
जो केवल गरजना जानते हैं
तुम भी तो
निद्रा के साथ–साथ
आ जाते हो, रात भर
मुझे स्वर्गिक वातावरण की
अनुभूति कराने
और
जैसै ही
मैं उस आनन्द को
भोगने की चेष्टा करता हूँ
तुम निद्रा के साथ ही चले जाते हो
उस टूटे हुए तारे की तरह
जो अपना अस्तित्व ही खो देता है
ठीक उन
बरसाती बुलबुलों की तरह
जो एक बूंद के साथ जन्म लेते हैं,
अगली ही बूद से लुप्त हो जाते हैं
मेरा जीवन भी तो तुम्हारी ही तरह
नश्वर हैं, सास रुकने तक
उसके बाद रह जायेगा
मेरे कर्मो का ढेर
अच्छे–बुरे होने का
अहसास कराने के लिये ।

गणेश ! बताओ तो·

गणेश !
तुमने दूध
क्या पिया
फासीवाद ने
मेरा दरवाजा
खटखटा दिया, और
घर में घुस आया
बताओ तो
अब तुम
क्या पीने जा रहे हो ?

शम्बूक !

शम्बूक !
तुमने रामराज्य में
तपस्या कर
सशरीर स्वर्ग जाना चाहा
तुम्हारी यही तपस्या
सही नहीं गई
ब्राम्हणों, क्षत्रियो व
खुद राजा राम तक
सबने षडयत्र रचा, और
तुम्हारा सिर धड पर न रहा
तुम मारे गये बेकसूर
राजा राम के हाथो
रामराज्य मे तबसे
हत्यारा राजा राम
महिमामंडित हो
भगवान श्री राम हो गया ।

नदी सदियों से प्यासी है

बाढ़ के प्रवाह से
उफनती नदी
किनारो से कहती है
मैं प्यासी हूँ
किनारे नहीं मिलते
आपस मे
नदी की प्यास बुझाने
हमेशा की तरह
सुना है उनकी आवाज
वेगवान पानी को थामने का
असफल प्रयास करने वाली
स्थिर शिलाओ के शोर मे
डूब जाती है
नदी सदियो से प्यासी है ।
अपने उद्गम से ही
पुकारती है नदी
मुँह फाड़े गौमुख को
जहाँ से प्रस्फुटित धारा की लय मे
गुम हो गई है
नदी की पुकार
नदी ने गुहार लगाई
ऊँचें पहाडों को
जिनके बीच उसकी गुहार
आज भी प्रतिध्वनित हो रही है
नदी सदियो से प्यासी हैं ।
कल कल करती
अभिशप्त नदी
सागर तक जा पहुँची
अथाह जल देख
फिर चिल्लाई
मैं प्यासी हूँ

तुम्हारी प्रत्याकृति

तुम्हारी आँखों में
मुझे एक प्रतिकृति
दिखाई देती हैं वसुधा !
धुँधली सी
खोई–खोई या
किसी विचार मे डूबी
अपनी बडी हो चुकी
बेटी की चिन्ता मे लीन
चेहरा सा लगता है
थका–थका
पीला पडता चेहरा
नहीं–नहीं
रक्त की कमी नहीं है
शायद चिन्ता ने
तनाव पैदा कर
तुम्हारे चेहरे को
मलिन किया है,
उस पर आँखें डूबी–डूबी सीं
शून्य में निहारतीं
खोजती नजरें किसी
अनुत्तरित प्रश्न के उत्तर को
जा टिकती हैं क्षितिज पर
जहाँ जमीं–आसमाँ के मिलन का
भ्रम सा होता है, परन्तु
प्रश्न फिर भी अनुत्तरित हैं ।

स्याह पडती सायँ
तुम्हारी आँखों मे
उस आकृति को पहचानने की
असम्भव कोशिश की मैनें वसुधा ।
और तुम्हारे प्रश्नों के ढेर में
एक प्रश्न और छोड दिया

मोना तुम मरी क्यों ?

ओ कजरवारा की मोना !
तुम मरी
भूख से
बुखार से
कुत्ता काटने से
उपेक्षा से
या
अपनी अभिरक्षा से
वंचित हो मरीं ,
व्यथित हो मरीं
क्या तुम नहीं जानती ?
गरीब-गुरबा मरते हैं
झुलसती गर्मियो में लू से
कड़कड़ाती ठण्ड मे शीत से
बरसात मे बाढ से
गाज गिरने से
मौका लगे तो
दूसरो की लगाई आग से
इलाज के अभाव मे
बीमारी से, पर
खाने को जब तक होती हैं
हवा, घाँस, भीख या रहम
तब तक गरीब नहीं मरते
कभी भूख से
ओ मोना !
कजरवारा मे तो
दावो प्रतिदावो के बीच
यह सब था
फिर तुम मरी क्यो ?
शासन नहीं कहता
तुम्हारी लाश उखाडे बिना

दर्द

दरख्तो की मानिद
देखता रहा मै
वहशी दरिंदों के हाथो
अपनी ही छाया मे
किसी येबस अवला को लुटते
इच्छाशक्ति के अभाव मे
कुछ भी नही कर पाया मैं
और जख्म खाऐ दरख्त की तरह
केवल अपना ही दर्द सहता रहा ।

वेलजी

नदी बहा ले गई थी
वेलजी 1 को पिछली जुलाई में
अपने साथ माही 2 से मिलाने,
मई के नवतपा में
माही आज ठहर गई हैं
गैमन पुल के नीचे सुसताने
दबा होगा वेलजी
यहीं–कहीं सूखी गाद मे
औंधे मुँह,
हाथ उपर किऐ
अटका होगा उसका हाथ
खरबूजे के खेत तैयार करते हल मे
लाश !
अब खाद मे तब्दील हो चुकी होगी
खूब फलैगा खरबूजा

या फिर

खा गई होंगी बडी–मोटी मछलियाँ
उसका मांस
नोच–नोच कर
रेत मे दफ़न हुई होगी
बची–खुची हड्डियाँ
मेरे सामने यहा पुल के बायीं ओर
बिक रही हैं
कटी ,तली , भूनी वही मछलियाँ
जिनके मांस में
वेलजी का मांस भी मिल गया है ।

1एक दलित 2 पश्चिमी म.प्र. की एक नदी

सिलसिला

क्यो कर लिखते है लोग
नारी के श्रृगार पर
कल्पना के सागर मे
गोते लगाते हुए
खोज लाते हैं,
तरह–तरह के अलंकरण,
रत्नाभूषण पहनाकर
शब्दो मे बुन देते हैं
नारी का प्यार
भूल जाते हैं उसकी ममता
खो जाता हैं मा का वात्सल्य
पीछे रह जाती हैं
बेबस मजबूरी
सामने रहता हैं वर्णन
नारी के अंग प्रत्यगो का
उनसे अछूती रह जाती हैं,
सिरबोझा ढोती
लकडी बेच कर पैसा पाने वाली
हाट बाजार करती
दलित मजदूरिन
जो मोल–भाव मे कम पाती
क्रय करती अपनी आवश्यकता
उँचें भावो पर
दोनो ओर लुटी जाकर घर जाती
फिर अगला सप्ताह, अगला हाट
हर बार यही सिलसिला ।

गौरैया

मैं हाथो में गांडीव ले
रुपसी द्रोपदी के लिए
प्रत्याचा चढा
घूमती मछली की
आँख बेधनेवाला
पार्थ नहीं था ।
न ही
शब्दवेधी बाणो से
भौंकते श्वान का मुँह
भरनेवाला साधनारत एकलव्य
फिर मेरी गुलैल से छूटा पत्थर
तुम्है कैसै लगा गौरैया ?
तुम अब नहीं हो
कोई उत्तर भी नहीं है
मैं जानता हूँ
तुम्हारे और मौत के बीच
मैं, गुलैल व पत्थर ही तो थे
मेरा मन मुझे
माफ नहीं कर रहा
मै प्रायश्चित करना चाहता हूँ ।

शान्ति कपोत

(दादा किशन सोनी से चर्चा करते हुए)

कबूतर नहीं जानता फर्क
मंदिरों, मस्जिदो, गिरजाघरो या
हवेलियो, झोपडियों व खण्डहरो में
इनकी मुँडेर, दीवारो, मेहराबो, उजारदानो तथा
सदियो से कुतुब औं पीसा की
मीनारो पर जहाँ वह गुजारता हैं
अपना समय एक सा
जिन्दगी मे धर्म की विकृतियो से वह वाकिफ है
उसे अजानों व घण्टो की
आवाजो के बारे में है
बारीक जानकारियाँ,
तभी तो वह,
हम इसानो के मध्य
शान्ति का प्रतीक बना है ।

गौरैया–2

उडती हुई गौरैया
चली आती है
हमेशा की तरह
मेरे जेहन मे
चिडची करती
मन के कौने पर बैठ
अपने अक्स पर बार–बार चौंच मारती
चिल्ला–चिल्ला कर कहती मुझसे
निकल जाओ
यहाँ सिर्फ मैं ही रहूँगी
तुम्हारे जैसै
अस्थिर अन्तर्मन की
मुझे जरुरत नहीं है ।

छप्पर फाड़ कर देना

दो जोड़ी
बेबस आँखे
कभी आसमान को निहारती
कभी झोपडी के छप्पर को
जो था कल तक
छन्नी सा
कभी चाँद को दिखाता
चाँदनी बिखेरता
सूरज के प्रकाश को बाँटता

आज
कडकडाती बिजली की चमक मे
माँ का बेटी को
छाती से लगा कर
फटे आँचल से ढँपना
फिर काले आसमान की ओर
"देख कर सोचती है
क्यों मेहरबान बादल
उमडता हुआ
आज ही
सारा पानी उडेल रहा है"

इतने मे
झोपडी के पीछे वाली
दीवाल का भरभरा कर गिरना
छप्पर से टपकते पानी का
टूटी दीवार से आती बौछारो से
मिलकर एकाकार हो फर्श पर फैल जाना
पास ही कहीं
बादलो का फट पडना
नदी , नालो व मैदानो का सीमा तोड
जलप्लावित होना

राजा बहरे थे

दास्तां-ए-गुलामी बयां करता
अंग्रेजियत की शताब्दी पर बना
कीर्ति-स्तंभ खड़ा है अकड़ा हुआ
जिसकी नींव में गिरकर मरे
बेगार करते कई दलित बेमौत
उनका क्रन्दन अब भी गूंज रहा है।

घण्टाघर के हर ठोके के साथ
महल की दीवारों से टकराकर लौटती है
उनकी शांत आवाज
जिसे सुनने के लिए
राजा के कान नहीं थे तैयार ।

बचे-खुचे दलित मजदूरों को
रियाया ने भीख दी काम के बदले
उनकी आत्मा
आज भी भटक रही है
गलियों में भीख मांगने ।

मुझे ही........!

जाति
खेतो मे पैदा नहीं हुई
घर के अन्दर–बाहर रखे
गमलों मे नहीं खिली कभी
किसी पेड के फल से भी
पल्लवित नहीं हुई
ना ही किसी कारखाने में निर्मित हुई
यह बनी है
तुम्हारे ही बोये बबूल के कॉंटो की नोंक पर
बामन !
तुम्हारे ही स्वार्थ पूर्ति के लिये
यह हरदम
मुझे दंश मारती है
तुम नहीं काटोगे
अपने बोये बबूल
मुझे ही डालना होगा मट्ठा
तुम्हारी और इसकी जडो मे ।

बिना शीर्षक

ईश्वर यदि तुम हो । तो ,
क्या चाहते हो ?
अपनी नियमित पूजा–पाठ
आडम्बरयुक्त आराधना–अर्चना
पाखण्डपूर्ण सेवा–समर्पण
भोग–विलासी जीवन
तिलकधारियो की चापलूसी
जनेऊवालों की खुशामद
भेदभाव–दुराचार
छुआछूत वाली वर्ण व्यवस्था
या कुछ और
तुम जो भी चाहते हो,
मनभेद मत रखो
साफ–साफ कहो ।

जब चाँद गिर पड़ेगा

चाँद जब कभी गिर पड़ेगा
आसमान से धरती पर
हम निहारना बंद कर देगें
धरती के चाँद को
बूढी नानी का चरखा थम जाएगा
रुंध जायेगा लोरी गाती माँ का गला
नहीं रहेगा
बच्चों का चन्दामामा
यह सृष्टि भी नहीं रहेगी
चलो,
ऐसे ही सही
जातियो की झंझटो से
पिण्ड तो छूट जायेगा ।

कहाँ हो मुक्तिदाता

नाचता रहा दिन-ब-दिन
अपनो की ही उगलियो पर
उनके इशारो के अनुरुप
तृप्त करता रहा
उनकी लालसाऐ
हरदम मारकर अपनी इच्छाऐं
जन्म से ही मजबूत अदृश्य धागो मे बंधा
मैं आज तक बंधुआ हूँ,
और तुम !
कहाँ चले गये हो
मुक्तिदाता ?

बहुत हो गया

अब
बहुत हो गया
धर्म के झण्डाबरदारो !
मुँडेर पर बैठ
तालाब मे
पत्थर फेक कर
लहरे गिनना छोड दो,
वरना
हम तोड देगे पाल
बहा देगे
सारा का सारा पानी
तुम्हारे खेतो मे ,
खलिहानो में ,
मकानो , और
तुम्हारे दकियानूसी विचारो मे
तुम्हें नेस्तनाबूद करने ।

मुझे गर्व है

मुझे गर्व है ,
अपने हिन्दू होने पर
मुझे गर्व है ,
अपनी चातुर्वर्ण व्यवस्था पर
मुझे गर्व है ,
अपने शूद्र होने पर
मुझे गर्व है ,
दलित कहलाने पर
मुझे गर्व है ,
सवर्णो की बेगारी करने पर
मुझे गर्व है ,
अपने साथ छुआछूत का व्यवहार किये जाने पर
मुझे गर्व है ,
अपने ही गांव के सार्वजनिक कुऐं से खदेडे जाने पर
मुझे गर्व है ,
चमरोटी की महिलाओं के साथ मुँह काला करने वालो पर
मुझे गर्व है ,
जहानाबाद नरसंहार करने वाले तथाकथित अगडों पर
मुझे गर्व है ,
कम्बलापल्ली के रेड्डियों पर
जिन्होने नौ दलितो को जिन्दा ही जला दिया
मुझे गर्व है ,
मुडपहार की जागरूक जनता पर
जिसने दलितो का हुक्का–पानी बंद कर दिया
मुझे गर्व है ,
धर्म के सभी ठेकेदारो पर
जो अब भी तोता रटंत लगा रहे है
मुझे गर्व है ,
मैं दलित होकर
अब भी हिन्दू ही हूँ

मुझे गर्व है,

इतना सब होने पर भी
कोई माई का लाल
मुझे लानत नहीं भेजता !

रोको ब्राम्हण

रोको ब्राम्हण ।
यदि तुम रोक सको तो
उस हवा को जो
मुझे छूकर
तुम तक आ रही है
जिसमें मेरे द्वारा छोडी गई
साँस भी
घुलमिल गई है
तुम्हारा धर्म भ्रष्ट करने ।
साफ कर सकते हो तो करो
नदी के उस पानी को
जिसमें नहाया है
पिता ने
पिछले गाँव मे ,
तो छोड़ दो
अपना यह ढकोसला
हर बहता पानी गंगा हैं ।
रोक सको तो
रोको ब्राम्हण ।
उस प्रकाश किरण को
जो तुम तक पहुँचने से पहले ही
मुझे छूकर गई है
तुम्हे अपवित्र करने ।
रोक सको तो
रोको ब्राम्हण
मेरे हिस्से की धूप व चाँदनी
तुम्हारे खेत की मानिद
मेरे खेत मे भी
समान रूप से
बरसता पानी ।

तुममे हो हिम्मत तो
डालो गर्म–गर्म पिघला शीशा
मेरे कानों मे
मैने तुम्हारे ऋग्वेद की
ऋचाऍं पढ़ीं औ सुनी है
रोको ब्राम्हण !
रोक सको तो।

तुम्हारी पवित्रता

मेरे पुरखे
अछूत थे
जो निम्न कहे जाने वाले
धन्धो मे जीवनयापन करते थे
साथ ही करते थे
ब्राम्हणो की सेवा–शुश्रूषा
उनके घरो,
खेतों मे निपटाते
सारा कार्य
बिना मजूरी पाये।

मेरे पुरखे
अपने पेट की आग बुझाने
मरे जानवर की खाल से
तथाकथित द्विजो के पाँवो को
बिवाई फटने से बचाने
बनाते थे चरणपादुकाऐं
खुद नगें पाँव रहकर
बदले मे पाते
भीख सा अपर्याप्त अनाज ।

मेरे पुरखों ने ही बनाई
मरी गाय के चमडे से
तुम्हारे कुऐ से
पानी निकालने चडस,
परन्तु उससे उलीचा पानी
मेरी प्यास बुझा न सका
मैं भी अपने पुरखो की मानिद
अछूत था , और
कुआँ/उसका पानी
रहा फिर भी पवित्र
तुम्हारे लिये

तुम पीते रहे जीवन भर
मरी गाय के चमडे से
उलीचा पानी
यह कैसी थी तुम्हारी पवित्रता
अपने स्वार्थ के लिये
कुटिल ब्राम्हण !
मुझे घिन आती है तुम पर !

अंधा–बहरा भगवान

वे छोटे–छोटे बच्चे
खेल रहे थे
सितोलिया
कपडे की गेद बना
पुराने खण्डहरनुमा मंदिर के पास
एक पर एक
सात पत्थर जमा
फोड़ते
सितोलिया
मारते गेद
एक दूसरे पर तान
बार–बार जमाते और फोडते
सब भूलकर अपनी जात
मंदिर के इर्द–गिर्द
दौड रहे थे चिल्लाते
एक का निशाना चूका
गेंद गई जीर्ण–शीर्ण मंदिर में
वह भी पीछे–पीछे गया खोजने
वहाँ बैठा था
मोटी तौंद
चोटीवाला एक पुजारी
उससे सहा नहीं गया
एक अछूत का
अनायास मंदिर में घुस आना
जहाँ था
वह और उसका भगवान
पडित ने
उस बालक को
मारा डण्डे से
किया लहूलुहान

उस रोते अबोध बालक को बचाने
वहाँ क्यों प्रकट नहीं हुआ
भगवान
अधा–बहरा

सुनो ब्राम्हण !

ब्राम्हण !
तुमने कहा
मै ब्रम्हा के मुख से
पैदा हुआ ,
गाँव का ठाकुर
हाथो से जन्मा ,
उदर से बनिया ,
मेरा जन्मना
तुमने ब्रम्हा के पैरों से बताया
इस तरह सृष्टि रची गई ।
तुम्हारे अनुसार
ब्रम्हा ने भिन्न–भिन्न अंगो से
मानव पैदा किये
प्रश्न उपस्थित होता हैं
क्या ब्रम्हा योनियों के बने थे ? या
मुख, हस्त, उदर, पाँव मैथुन के आदी थे ?
बोलो ! है उत्तर तुम्हारे पास ?

गाते सुना था

मैने सुना था
सन् 64 में
गाँधीसागर बनकर पूरा हुआ
तब आये थे जवाहरलाल
उसी समय से आयी थी
बिजली हमारे गाँव में ।

मैने बडे भाई की शादी मे
माँ, दादी, ताई को
गाते सुना था
सन्1967 मे
"गाँव–गाँव में बिजलियाँ लग गई
चक्कियाँ चल गई हजार रे
मेरा बना जवाहरलाल"
तब आयी ही थी बिजली
मेरे मोहल्ले मे चौक के किनारे
खडे खम्भे पर तारो पर झूलते
लट्टू मे
पीली रोशनी लिए ।

माँ के साथ पहली बार
बिजली की चक्की भी देखी
अनाज पिसाते मागीलाल की चक्की पर जहाँ
पुरानी बंद पडी भाँप की चक्की भी थी ।

माँ
सवेरे–सवेरे
भोर से पहले ही उठकर
पीसा करती थी अनाज
घर के कोनें मे बंधी
अलगनी के नीचे रखी

घट्टि॰ मे लोक गीत गाते हुए
माँ ने कभी नहीं सीखा
शास्त्रीय संगीत
सब पाया विरासत में
अपनी माँ व सास से
बहुत भाता था
माँ का इस तरह गाना ।

मैनें वर्षों बाद
अपनी शादी में
माँ–ताई को घट्टि चला
मेहंदी पीसते हुए
पुन: गाते सुना था
जवाहरलाल का गीत
तब समझा मैं
क्यों गाया जाता है जवाहरलाल
मेरा बेटा अभी छोटा है
पत्नी भी नहीं जानती यह गीत
घर मे अब घट्टि भी नहीं है ।

कंदील !

मेरा बेटा
देखना चाहता हैं
कंदील की रोशनी
उसने पहले कभी
देखा नहीं था कंदील
मेरी माँ से सुना
पापा पढा करते थे
तुम्हारी उम्र मे
कंदील की रोशनी मे ।

बेटा जानता है
बिजली के बारे में
आज पहली बार
उसने देखा कंदील छपा हुआ
लालू के चुनाव प्रचार पोस्टर मे
कंदील की रोशनी
नहीं देखी अब तक
मेरी माँ ने कहा उससे
तुम्हे मिलेगा
अपने दादा द्वारा सहेजकर रखे
पुराने सामान में खोजने पर
टूटी हुई हण्डी लगा कंदील
जिससे घासलेट झरा करता था
पडा होगा अटारी में
अपने दुर्दिनों पर ऑसू बहाता ।

बेटा !
तुम पौंछ सको तो
पौंछना उसके ऑसू
साफ करना उस पर घिर आयी कालिमा
प्रदीप्त करना उसे

जब बिजली हो गुल
उसकी यादो मे
खो जाना पढते हुए
तब बताएगा तुम्हे वह
कैसे काम करते थे तुम्हारे दादा ?
कैसै पढते थे तुम्हारे पिता ?
कैसे निपटाती थी मैं घर का काम
दिन भर की बेगारी के बाद
घने अंधकार मे
एक अकेले प्रकाशमान
कदील के साथ ।

बेटा !
तुम पूछना उससे
कैसे चलाते थे हम घर ?
कैसै पढाते थे तुम्हारे पिता को ?
उसके समय में
वही तो एकमात्र चश्मदीद गवाह है
हमारे समय का
तुम्हारे समय में ।

चाहता हूँ ....!

मैं भी परिन्दो की भाति
अनन्त मुक्ताकाश मे
विचरण करना चाहता हूँ , परन्तु
जाति के बोझ से झुके कंधे
मुझे उडने नहीं देते
इन्हे कैसै हल्का करू !
पेट भरने की चिन्ता व अर्थाभाव की बेडियो ने
मेरे पैरो को जकडा हुआ है,
निष्ठुर समाज ने
होश सम्भालने से पहले ही
मेरे पर काट दिये हैं, किन्तु
मन के परो को फडफडाने से कैसै रोकू
चाहता हूँ उडना
कोई बताये कैसै उडूँ ।

असंगघोष

जन्म 29.10.62, म.प्र के एक कस्बा जावद में

शिक्षा स्नातक

रचनाकर्म कविता/कहानी विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं
में प्रकाशित
सह संपादक **तीसरापक्ष** त्रैमासिक

संप्रति म.प्र.राज्य प्रशासनिक सेवा

संपर्क 10/5 डी.एफ.ओ. कपाउण्ड
चौथे पुल के पास ,
जबलपुर –482001